कैकेयी का कोपभवन में जाना

चौपाई :

*** कुबरीं करि कबुली कैकेई। कपट छुरी उर पाहन टेई॥ लखइ ना रानि निकट दुखु कैसें। चरइ हरित तिन बलिपसु जैसें॥1॥

भावार्थ:

कुबरी ने कैकेयी को (सब तरह से) कबूल करवाकर (अर्थात बलि पशु बनाकर) कपट रूप छुरी को अपने (कठोर) हृदय रूपी पत्थर पर टेया (उसकी धार को तेज किया)। रानी कैकेयी अपने निकट के (शीघ्र आने वाले) दुःख को कैसे नहीं देखती, जैसे बलि का पशु हरी-हरी घास चरता है। (पर यह नहीं जानता कि मौत सिर पर नाच रही है।)॥1॥

*** सुनत बात मृदु अंत कठोरी। देति मनहुँ मधु माहुर घोरी॥ कहइ चेरि सुधि अहइ कि नाहीं। स्वामिनि कहिहु कथा मोहि पाहीं॥2॥

भावार्थ:

मन्थरा की बातें सुनने में तो कोमल हैं, पर परिणाम में कठोर (भयानक) हैं। मानो वह शहद में घोलकर जहर पिला रही हो। दासी कहती है- हे स्वामिनि! तुमने मुझकोएक कथा कही थी, उसकी याद है कि नहीं?॥2॥

*** दुइ बरदान भूप सन थाती। मागहु आजु जुड़ावहु छाती॥ सुतहि राजु रामहि बनबासू। देहु लेहु सब सवति हुलासू॥3॥

भावार्थ:

तुम्हारे दो वरदान राजा के पास धरोहर हैं। आज उन्हें राजा से माँगकर अपनी छाती ठंडी करो। पुत्र को राज्य और राम को वनवास दो और सौत का सारा आनंद तुम ले लो॥3॥

*** भूपति राम सपथ जब करई। तब मागेहु जेहिं बचनु न टरई॥ होइ अकाजु आजु निसि बीतें। बचनु मोर प्रिय मानेहु जी तें॥4॥

भावार्थ:

जब राजा राम की सौगंध खा लें, तब वर माँगना, जिससे वचन न टलने पावे। आज की रात बीत गई, तो काम बिगड़ जाएगा। मेरी बात को हृदय से प्रिय (या प्राणों से भी प्यारी) समझना॥4॥

दोहा :

*** बड़ कुघातु करि पातकिनि कहेसि कोपगृहँ जाहु। काजु सँवारेहु सजग सबु सहसा जनि पतिआहु॥22॥

भावार्थ:

पापिनी मन्थरा ने बड़ी बुरी घात लगाकर कहा- कोपभवन में जाओ। सब काम बड़ी सावधानी से बनाना, राजा पर सहसा विश्वास न कर लेना (उनकी बातों में न आ जाना)॥22॥

चौपाई :

*** कुबरिहि रानि प्रानप्रिय जानी। बार बार बुद्धि बखानी॥ तोहि सम हित न मोर संसारा। बहे जात कई भइसि अधारा॥1॥

भावार्थ:

कुबरी को रानी ने प्राणों के समान प्रिय समझकर बार-बार उसकी बड़ी बुद्धि का बखान किया और बोली- संसार में मेरा तेरे समान हितकारी और कोई नहीं है। तू मुझे बही जाती हुई के लिए सहारा हुई है॥1॥

*** जौं बिधि पुरब मनोरथु काली। करौं तोहि चख पूतरि आली॥ बहु बिधि चेरिहि आदरु देई। कोपभवन गवनी कैकेई॥2॥

भावार्थ:

यदि विधाता कल मेरा मनोरथ पूरा कर दें तो हे सखी! मैं तुझे आँखों की पुतली बना लूँ। इस प्रकार दासी को बहुत तरह से आदर देकर कैकेयी कोपभवन में चली गई॥।2॥

*** बिपति बीजु बरषा रितु चेरी। भुइँ भइ कुमति कैकई केरी॥ पाइ कपट जलु अंकुर जामा। बर दोउ दल दुख फल परिनामा॥3॥

भावार्थ:

विपत्ति (कलह) बीज है, दासी वर्षा ऋतु है, कैकेयी की कुबुद्धि (उस बीज के बोने के लिए) जमीन हो गई। उसमें कपट रूपी जल पाकर अंकुर फूट निकला। दोनों वरदान उस अंकुर के दो पत्ते हैं और अंत में इसके दुःख रूपी फल होगा॥3॥

*** कोप समाजु साजि सबु सोई। राजु करत निज कुमति बिगोई॥ राउर नगर कोलाहलु होई। यह कुचालि कछु जान न कोई॥4॥

भावार्थ:

कैकेयी कोप का सब साज सजकर (कोपभवन में) जा सोई। राज्य करती हुई वह अपनी दुष्ट बुद्धि से नष्ट हो गई। राजमहल और नगर में धूम-धाम मच रही है। इस कुचाल को कोई कुछ नहीं जानता॥4॥

दोहा :

*** प्रमुदित पुर नर नारि सब सजहिं सुमंगलचार। एक प्रबिसहिं एक निर्गमहिं भीर भूप दरबार॥23।

भावार्थ:

बड़े ही आनन्दित होकर नगर के सब स्त्री-पुरुष शुभ मंगलाचार के साथ सज रहे हैं। कोई भीतर जाता है, कोई बाहर निकलता है, राजद्वार में बड़ी भीड़ हो रही है॥23॥

चौपाई :

*** बाल सखा सुनि हियँ हरषाहीं। मिलि दस पाँच राम पहिं जाहीं॥ प्रभु आदरहिं प्रेमु पहिचानी।

पूँछहिं कुसल खेम मृदु बानी॥ 1॥
भावार्थ:
श्री रामचन्द्रजी के बाल सखा राजतिलक का समाचार सुनकर हृदय में हर्षित होते हैं। वे दस-पाँच मिलकर श्री रामचन्द्रजी के पास जाते हैं। प्रेम पहचानकर प्रभु श्री रामचन्द्रजी उनका आदर करते हैं और कोमल वाणी से कुशल क्षेम पूछते हैं॥1॥
*** फिरहिं भवन प्रिय आयसु पाई। करत परसपर राम बड़ाई॥ को रघुबीर सरिस संसारा। सीलु सनेहु निबाहनिहारा॥2॥
भावार्थ:
अपने प्रिय सखा श्री रामचन्द्रजी की आज्ञा पाकर वे आपस में एक-दूसरे से श्री रामचन्द्रजी की बड़ाई करते हुए घर लौटते हैं और कहते हैं: संसार में श्री रघुनाथजी के समान शील और स्नेह को निबाहने वाला कौन है?॥2॥
*** जेहिं-जेहिं जोनि करम बस भ्रमहीं। तहँ तहँ ईसु देउ यह हमहीं॥ सेवक हम स्वामी सियनाहू। होउ नात यह ओर निबाहू॥3॥
भावार्थ:
भगवान हमें यही दें कि हम अपने कर्मवश भ्रमते हुए जिस-जिस योनि में जन्में, वहाँ-वहाँ (उस-उस योनि में) हम तो सेवक हों और सीतापति श्री रामचन्द्रजी हमारे स्वामी हों और यह नाता अन्त तक निभ जाए॥
*** अस अभिलाषु नगर सब काहू। कैकयसुता हृदयँ अति दाहू॥ को न कुसंगति पाइ नसाई। रहइ न नीच मतें चतुराई॥4॥
भावार्थ:
नगर में सबकी ऐसी ही अभिलाषा है, परन्तु कैकेयी के हृदय में बड़ी जलन हो रही है। कुसंगति पाकर कौन नष्ट नहीं होता। नीच के मत के अनुसार चलने से चतुराई नहीं रह जाती॥4॥
दोहा :
*** साँझ समय सानंद नृपु गयउ कैकई गेहँ। गवनु निठुरता निकट किय जनु धरि देह सनेहँ॥24॥
भावार्थ:
संध्या के समय राजा दशरथ आनंद के साथ कैकेयी के महल में गए। मानो साक्षात स्नेह ही शरीर धारण कर निष्ठुरता के पास गया हो!॥24॥
चौपाई :
*** कोपभवन सुनि सकुचेउ राऊ। भय बस अगहुड़ परइ न पाऊ॥ सुरपति बसइ बाहँबल जाकें। नरपति सकल रहहिं रुख ताकें॥1॥
भावार्थ:

कोप भवन का नाम सुनकर राजा सहम गए। डर के मारे उनका पाँव आगे को नहीं पड़ता। स्वयं देवराज इन्द्र जिनकी भुजाओं के बल पर (राक्षसों से निर्भय होकर) बसता है और सम्पूर्ण राजा लोग जिनका रुख देखते रहते हैं॥1॥

*** सो सुनि तिय रिस गयउ सुखाई। देखहु काम प्रताप बड़ाई॥ सूल कुलिस असि अँगवनिहारे। ते रतिनाथ सुमन सर मारे॥2॥

भावार्थ:

वही राजा दशरथ स्त्री का क्रोध सुनकर सूख गए। कामदेव का प्रताप और महिमा तोदेखिए। जो त्रिशूल, वज्र और तलवार आदि की चोट अपने अंगों पर सहने वाले हैं, वे रतिनाथ कामदेव के पुष्पबाण से मारे गए॥2॥

*** सभय नरेसु प्रिया पहिं गयऊ। देखि दसा दुखु दारुन भयऊ॥ भूमि सयन पटु मोट पुराना। दिए डारि तन भूषन नाना॥3॥

भावार्थ:

राजा डरते-डरते अपनी प्यारी कैकेयी के पास गए। उसकी दशा देखकर उन्हें बड़ा ही दुःख हुआ। कैकेयी जमीन पर पड़ी है। पुराना मोटा कपड़ा पहने हुए है। शरीर के नाना आभूषणों को उतारकर फेंक दिया है।

*** कुमतिहि कसि कुबेषता फाबी। अनअहिवातु सूच जनु भाबी॥ जाइ निकट नृपु कह मृदु बानी। प्रानप्रिया केहि हेतु रिसानी॥4॥

भावार्थ:

उस दुर्बुद्धि कैकेयी को यह कुवेषता (बुरा वेष) कैसी फब रही है, मानो भावी विधवापन की सूचना दे रही हो। राजा उसके पास जाकर कोमल वाणी से बोले- हे प्राणप्रिये! किसलिए रिसाई (रूठी) हो?॥4॥ छन्द :

*** केहि हेतु रानि रिसानि परसत पानि पतिहि नेवारई। मानहुँ सरोष भुअंग भामिनि बिषम भाँति निहारई॥ दोउ बासना रसना दसन बर मरम ठाहरु देखई। तुलसी नृपति भवतब्यता बस काम कौतुक लेखई॥

भावार्थ:

'हे रानी! किसलिए रूठी हो?' यह कहकर राजा उसे हाथ से स्पर्श करते हैं, तो वह उनके हाथ को (झटककर) हटा देती है और ऐसे देखती है मानो क्रोध में भरी हुईनागिन क्रूर दृष्टि से देख रही हो। दोनों (वरदानों की) वासनाएँ उस नागिन की दो जीभें हैं और दोनों वरदान दाँत हैं, वह काटने के लिए मर्मस्थान देख रही है। तुलसीदासजी कहते हैं कि राजा दशरथ होनहार के वश में होकर इसे (इस प्रकार हाथ झटकने और नागिन की भाँति देखने को) कामदेव की क्रीड़ा ही समझ रहे हैं।

सोरठा :

*** बार बार कह राउ सुमुखि सुलोचनि पिकबचनि। कारन मोहि सुनाउ गजगामिनि निज कोप

कर॥25॥

भावार्थ:

राजा बार-बार कह रहे हैं- हे सुमुखी! हे सुलोचनी! हे कोकिलबयनी! हे गजगामिनी! मुझे अपने क्रोध का कारण तो सुना॥25॥